ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-6* Issue-6* September-2021
Anthology : The Research

संस्कृत भाषा एवं साहित्य में भारत
Sanskrit Language and Literature in India

Paper Submission: 10/09/2021, Date of Acceptance: 23/09/2021, Date of Publication: 24/09/2021

प्रदीप कुमार दीक्षित
एसोसिएट प्रोफेसर,
संस्कृत विभाग,
वी0एस0एस0डी0 कालेज,
कानपुर, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश

साहित्य सृजन के लिए लिपि की आवश्यकता होती है। जिसके माध्यम से व्यक्ति अपने भाव प्रकट करता है। संस्कृत साहित्य संस्कृत भाषा में लिपिबद्ध है। संस्कृत भाषा को देववाणी या भारती कहते हैं। निखिल विश्व की परिष्कृत भाषाओं में सबसे प्राचीन संस्कृत भाषा ही है। इस सन्दर्भ में विज्ञान एकमत है।

A script is needed for the creation of literature. Through which a person expresses his feelings. Sanskrit literature is written in Sanskrit language. The Sanskrit language is called Devvani or Bharati. Nikhil is the oldest Sanskrit language among the refined languages of the world. Science is unanimous in this regard.

मुख्य शब्द : संस्कृत भाषा एवं साहित्य।
Sanskrit Language and Literature.

प्रस्तावना

साहित्य सृजन के लिए लिपि की आवश्यकता होती है। जिसके माध्यम से व्यक्ति अपने भाव प्रकट करता है। संस्कृत साहित्य संस्कृत भाषा में लिपिबद्ध है। संस्कृत भाषा को देववाणी या भारती कहते हैं। निखिल विश्व की परिष्कृत भाषाओं में सबसे प्राचीन संस्कृत भाषा ही है। इस सन्दर्भ में विज्ञान एकमत है। भाषा विज्ञान के अनुसार संसार की भाषाओं में दो ही भाषाओं के ज्ञाताओं ने संस्कृति और सभ्यता का निर्माण किया है जो प्रथम आर्यभाषा और द्वितीय सामी (सेमेटिक) भाषा है। आर्यभाषा की दो शाखाएं है- पश्चिमी आर्य भाषा 2- पूर्वी आर्यभाषा है जिसमें पश्चिमी आर्यभाषा में यूरोप की सभी प्राचीन एवम आधुनिक भाषाएं आती हैं। आर्यभाषा से ही लैटिन, फ्रेन्च, जर्मन, ग्रीक, टयूयनिक आदि भाषाओं की उत्पत्ति हुई है। पूर्वी आर्यभाषा भी दो शाखाओं में विभक्त है- 1- ईरानी शाखा 2- भारतीय शाखा। ईरानी शाखा को जेन्द अवेस्ता' के नाम से जानते हैं जिसके अन्तर्गत पारसियों के मूल धार्मिक ग्रन्थों का प्रणयन हुआ है। भारतीय शाखा में संस्कृत भाषा ही सर्वश्रेष्ठ भाषा है और आर्यभाषाओं में संस्कृत भाषा है सर्व प्राचीन भाषा यह तो सर्वविदित है कि भाषा भावों की जननी है। संस्कृत शब्द की उत्पत्ति सम पूर्वक कृ धातू से हुई है जिसका वास्तविक अर्थ है संस्कार की गई भाषा। संस्कृत भाषा का सर्वप्रथम प्रयोग आदि कवि वाल्मीकि की रचना वाल्मीकि रामायण में प्राप्त होता है। मारुतिनन्दन हनुमान जी सीता जी से संस्कृत भाषा में बात करेगें तो सीता जी रावण मानकर भयभीत हो जाएगीं ऐसा विचार करते हैं-

'यदि वाचं प्रदास्यामि द्विजातिरिव संस्कृतानाम्।
रावणं मन्यमाना मां सीता भीता भविष्यति॥ *[1]

संस्कृत भाषा में निबद्ध संस्कृत साहित्य अद्वितीय है भारतीय मनीषियों ने काननों में विचरण करते हुए तथा वहीं पर निवास करते हुए अपने मनोभावों को संस्कृत भाषा में विश्व के सर्व प्राचीन ग्रन्थ और भारत के धर्म सर्वस्व वेद (ऋग्वेद, यजुर्वेद, अर्थववेद एवं सामवेद) इसी गौरवमयी गीर्वाण- वाणी में आराधनीय ऋषियों के द्वारा परब्रह्म परमात्मा की आन्तरिक प्रेरणा से दृष्ट हुए हैं। संस्कृत साहित्य में पृथ्वी की उत्पत्ति एवं प्रलय का विस्तृत तथा विविध वर्णन, मानव मस्तिष्क के विकसित करने तथा आर्यों की प्राचीन रीतियों, रुढ़ियों और परम्पराओं का सर्वांगीण वर्णन करने वाले धर्मशात्र भी संस्कृत भाषा में लिपिबद्ध हैं। संक्षेप में कहा जा सकता है कि संस्कृत साहित्य परा और अपरा विद्याओं का मनोरम भण्डार है जिसके रहस्यों का ज्ञान संस्कृत भाषा के द्वारा ही किया जा सकता है। संस्कृत भाषा और संस्कृत साहित्य के कारण ही भारत देश समग्र विश्व का शिरोमणि है।

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत शोधपत्र का उद्देश्य संस्कृत भाषा एवं साहित्य में सृजन में भारत के योगदान का अध्ययन करना है ।

विषय विस्तार

संस्कृत भाषा भाषा की अमूल्य एवं अनुपम निधि है। अनादि काल से हमारे देश के जातीय जीवन पर संस्कृत का अपरिमित प्रभाव पड़ा है। संस्कृत भाषा से भारतीय साहित्य और भारतीय संस्कृति पूर्णतया अनुप्राणित हैं। प्राचीनकाल से 'देववाणी' पदवी पर आसीन होकर वह आज भी भारतीयों के हृदय में श्रद्धा का संचार करती है। ऐसी उत्कर्षशालिनी, देशप्राण भाषा को कुछ लोगों ने मृत भाषा कहकर उसके प्रति घोर अन्याय किया है। ऐसे लोग वास्तव में संस्कृत भाषा के महत्व एवं आवश्यकता को नहीं जानते हैं। सम्प्रति संस्कृत भाषा, ग्रीक और लैटिन की अपेक्षा कहीं अधिक जीवित है। आंग्ल भाषा की

अपेक्षा कहीं अधिक हमारे जीवन को अधिक स्पर्श करती है। हमारा धार्मिक जीवन इसका ज्वलन्त प्रमाण है। 'वेद' और 'उपनिषद', 'रामायण' और 'महाभारत', 'गीता' तथा 'भागवत' आदिग्रथ देश में ही क्या सम्पूर्ण विश्व में कीर्ति पताका फहरा रहे है। भारतीयों के वर्तमान जीवन में भी संस्कृत भाषा का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है- उपनयन, पाणिग्रहण, अन्तिम आदि समस्त संस्कार तथा अन्य अनेक धार्मिक कृत्य संस्कृत भाषा द्वारा ही सम्पन्न होते हैं। संस्कृत भाषा हमारी सांस्कृतिक भाषा है। हमारा धार्मिक साहित्य संस्कृत भाषा का ऋणी है। जैनियों, बौद्धों ने जब प्राकृत पाली की नवीनता नीरस हो चली तो अपने ग्रन्थों की रचना संस्कृत भाषा में ही की। संस्कृत भाषा का प्रभाव केवल धार्मिक जीवन पर ही नहीं वरन् व्यावहारिक और सामाजिक जीवन पर भी प्रत्यक्ष परिलक्षित होता है।

संस्कृत साहित्य जीवित साहित्य है और दूसरों को जीवन प्रदान करने की क्षमता रखता है। इसी साहित्य की उत्कृष्टता ने जर्मनी, फ्रांस, इग्लैण्ड, अमेरिका आदि पाश्चात्य देशों के मनीषियों को अपनी ओर आकृष्ट किया। पिछले कुछ वर्षों में इन विदेशी विद्वानों द्वारा संस्कृत वांगमय का जो अनुशीलन हुआ है उसने संसार के सम्मुख संस्कृत साहित्य के महत्व को पूर्णतया प्रतिष्ठित कर उसके अध्ययन की अजस्र धारा बहा दी है।

भारतीय प्रजा के प्रातिभ संस्कारों की निधि भारतीय संस्कृति के परम्परावादी सदादर्शों का एकमात्र स्मारक यह संस्कृत-भाषा का विश्व व्याप्त सौरभ किसी के भी समर्थन की अपेक्षा नहीं रखता। 'न हि कस्तुरिकामोदः शमथेन विभाव्यते' उक्ति संस्कृत वांगमय के विषय में सर्वथा चरितार्थ होती है। निरवधि अतीत से आरम्भ कर ईसा की सत्रहवीं शती तक जो संस्कृत साहित्य सुधाकर अविराम समस्त कलाओं सहित, नाना विद्या-कौमुदी द्वारा लिखा मानस कुमुद को आल्हादित करता रहा था और इसीलिए सम्भवतः संस्कृत भाषा मृतभाषा कही जाने लगी थी परन्तु हमारे विवेकी शिक्षाविदों ने हमारे जीवन प्रवाह से सतत संलग्न इस संस्कृत साहित्य के घनिष्ट सम्बन्ध को स्वीकार किया है। देशी एवं विदेशी विद्वानों की पारदर्शिनी दृष्टि ने हमारे भविष्य के निर्माण में इसकी उदात्त परम्पराओं की उपयोगिता को परखा है और प्रवाहमान परिस्थितियों में संस्कृत-भाषा एवं साहित्य के अनुशीलन को ही नख-शिख विश्रंखल हो रहे समाज राष्ट्र और विश्व की व्यापक स्वस्थता एवं चिरामुख्य के लिए सजीवनौषथ घोषित किया है। साहित्य देश की राष्ट्रीय, सांस्कृतिक तथा जातीय भावनाओं का प्रतीक होता है। संस्कृत साहित्य भारत का राष्ट्रीय गौरव है। प्रत्येक देश के साहित्य में उस देश के निजी गुण-दोष प्रतिबिम्बित होते हैं। संस्कृत साहित्य भारत के गर्वोन्नत भाल की दीप्ति से संक्रान्त जीवन का चित्रण है।

वेदों, पुराणों, स्मृतियों, ब्राह्मण ग्रन्थों, आर्षकाव्यों (रामायण महाभारत आदि) एवं आधुनिक संस्कृत साहित्य में भारत एक आदर्श रूप में प्रतिष्ठित है। संस्कृत भाषा एवं साहित्य ने हमें ऐसे संस्कार दिये हैं जिन संस्कारों के बलबूते हमारा भारत 'जगद्गुरु' जैसी पदवी को अलंकृत कर चुका है। ऋग्वेद में भारत वर्ष में जन्म लेने वाला ज्ञानी मनुष्य शरीरान्त के पश्चात् अमृतत्व को प्राप्त होता है-

'सितासिते सरिते यत्र संगथे
तत्राप्लुतासो दिवमुत्पतन्ति।
ये वै तन्वं वि सृजन्ति धीरा-
स्ते जनासो अमृत्वं भजन्ते॥'[2]

अथर्ववेद में तो ऐसे भारत का वर्णन मिलता है जहाँ के वासी भारतवर्ष की रक्षा हेतु अपने प्राणों तक का उत्सर्ग करने पर तत्पर दिखाई देते हैं-

'उपस्थास्ते अनमीवा अयक्षमा
अस्मभ्यं सन्तु प्रथिवि प्रसूताः।
दीर्घ न आयुः प्रतिबुध्यमाना,
वयं तुभ्यं बलिहृतः स्याम्॥'[3]

वेदों में ही नहीं अपितु पुराणों में भी संस्कृत भाषा एवं साहित्य में भारत भूमि की तुलना स्वर्ग भी नहीं कर सका है। देवगण गीतों में गान करते हैं कि जिन्होंने स्वर्ग और निःश्रेयस के मार्ग को दिखाने वाले भारतवर्ष में जन्म लिया है वे मनुष्य हम देवताओं की अपेक्षा अधिक मान्य है-

'गायन्ति देवः किल गीतकानि
धन्यास्तु ते भारतभूमिभागे।
स्वर्गापवर्गास्पदमार्गभूते,
भवन्ति भूयः पुरुषाः सुरत्वात्॥'[4]

भारतवर्ष सम्पूर्ण विश्व में अपना एक अनुपमेय स्थान रखता है। सात समुद्रों वाली इस पृथ्वी के समस्त द्वीपों में भारतवर्ष का अत्यन्त पवित्र स्थान है भागवत पुराण में भारतवर्ष की पवित्रता दृष्टव्य है-

'अहो भुवः सप्तसमुद्रवत्या।
द्वीपेषु वर्षेष्वधि पुण्यमेतत्॥'[5]

सभी वेद, उपनिषद् तथा अन्य (बौद्ध, जैन आदि) धर्मग्रन्थ जिसके निधिस्वरूप हैं, वह विश्व प्रसिद्ध हमारी मातृभूमि भारत देदीप्यमान हो। संस्कृत साहित्य मनुष्यों का मृत्यु से हटाकर अमृतत्व की प्राप्ति का उपदेश देते हैं-

'सर्वे वेदा उपनिषदश्च सर्वा,
धर्मग्रन्थाश्चापरे निधयो यस्याः।
मृत्योर्मत्यानमृतं ये दिशन्ति वै,'
सा नो माता भारती भूर्विभासताम्॥'[16]

संस्कृत भाषा वैदिक काल से आधुनिक काल तक अजस्र रूप से प्रवाहित होती आ रही है। वैदिक साहित्य में भारत का पृथक अस्तित्व था। इसके बाद के साहित्य में भी भारत एक गौरवशाली, समृद्धिशाली देश के रूप में विश्व के समक्ष दृष्टिगोचर होता है। महाकवि कालिदास के साहित्य में भारत की संस्कृति के दर्शन यत्र तत्र होते हैं। अभिज्ञान शाकुन्तल में आश्रमवासिनी शकुन्तला भारत भूमि के वृक्षों का सहोदर तथा लताओं को सगी बहन मानती है तथा उसी प्रकार उनके साथ व्यवहार भी करती हैं शकुन्तला कहती है-

'न केवलं तात नियोग एव। अस्ति में सोदरस्नेहोऽप्येतेषु।'[16]

संस्कृत साहित्य में भारतवासियों की उदारता, प्रकृति प्रेम की गागर सर्वत्र झलकती मिलती है। अभिज्ञान शाकुन्तलम् में शकुन्तला की विदाई के समय आश्रम के वृक्षों से पिता कण्व शकुन्तला को अनुमति देने की बात कहते हुए कहते हैं कि हे! वृक्षों जब तक शकुन्तला तुम्हें जल नहीं पिला देती तब तक स्वंय जल नही पीती । आभूषण प्रिय होने पर भी वह तुम्हारे किसलयों को नही तोड़ती। पुष्प जन्म के समय उत्सव मनाती है वहीं शकुन्तला पतिगृह जा रही है। अतः सभी अनुमति प्रदान करें-

'पातुं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्मास्वपीतेषु या
नादत्ते प्रियमण्डनाऽपि भवतां स्नेहेन या पल्लवम्।
आद्य कुसुमप्रसूति समये यस्या भवत्युत्सवः
सेयं याति शकुन्तला पतिग्रहं सर्वैरनुज्ञायताम्॥'[17]

संस्कृत वाड्.मय की ओजस प्रभा से इस विशाल विश्व को ज्ञान एवं दिव्य दृष्टि प्राप्त हुई है, भारत की चेतना और चित्तवृत्ति को चित्ताकर्षक, हृदयस्पर्शी एवं मुक्तिपरक बनाने का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व संस्कृत वाड्.मय ने वहन किया है। धर्म प्रणव चिन्तन से भारत के जन-जन की आत्मा को अध्यात्मिकता से आर्विभूत किया है तथा हमारी सांस्कृतिक शक्ति को भी अपनी अमियरूपी पय से अभिसिंचित किया है।

संस्कृत वाड्.मय में वे सभी तत्व समाहित हैं जो हजारों वर्ष पूर्व से लेकर अद्यतन मानव के जीवन के लिए आवश्यक हैं। इसके अन्तर्गत -वेद – वेदान्त, उपनिषद, पुराण, रामायण, महाभारत, स्मृतिग्रन्थ, नीतिग्रन्थ, चिकित्साग्रन्थ, इतिहास, विज्ञान, विधिशास्त्र, अर्थशास्त्र, कामशास्त्र, स्थापत्य, गणित, वास्तुशास्त्र, ज्योतिषशास्त्र, समाजशास्त्र, काव्यशास्त्र, छन्दशास्त्र, आयुर्वेद-धनुर्वेद, दर्शन, महाकाव्य, सन्देश काव्य, नाट्यशास्त्र, व्याकरण, गद्यकाव्य, आख्यान साहित्य, कोशग्रन्थ चौंसठ कलाएँ आदि अपनी विशाल सामथर्य के साथ विद्यमान है। इसकी अनुपम वैभवता को देखकर हजारी प्रसाद द्विवेदी ने एक स्थल पर कहा है-

संस्कृत साहित्य वह गिरिश्रृंग है जिसपर चढ़कर मनुष्य काल के सुदीर्घ-स्रोत को बड़ी दूर तक देख सकता है। इस महानद के तट पर मनुष्य के उत्थान और पतन के अनेक चिह्न दिखाई देते हैं।

संस्कृत वाड्.मय सम्पूर्ण विश्व वाड्.मय में अनुपम एवं बेजोड़ है। आज जहाँ मानव मानव के रक्त का प्यासा बन गया है। अकारण सब ओर शत्रुता बढ़ रही है, कोई भी अपने अतिरिक्त किसी की प्रगति नहीं देखना चाह रहा है। परस्पर सम्मान की भावना मानो सूख गई है, वृद्धों की दुर्दशा हो रही है। वहीं संस्कृत वाड्.मय शिक्षा देते हुए स्पष्ट कहता है-

'अभिवादन शीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।
चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुर्विद्यायशोबलम्॥'[18]

आज शारीरिक रूप से अशक्त हो जाने पर साधन सम्पन्न व्यक्ति माता-पिता का आदर तो दूर उन्हें घर से निकालकर भिक्षावृत्ति अथवा आत्महत्या हेतु विवश कर देते हैं। जिसके निराकरण स्वरूप समाजसेवियों ने वृद्धाश्रमों का निर्माण कराया है। वास्तव में वृद्धाश्रम इसका समाधान नहीं हैं। वास्तविक समाधान है व्यक्ति में अच्छे संस्कारों का निर्माण करना। इस संदर्भ में महर्षि मनु कहते हैं कि मनुष्य को जन्म देने, पालन-पोषण करने एवं पठन-पाठन कराने आदि में जो कष्ट माता-पिता उठाते हैं, उसका अनेक जन्मों में भी बदला नहीं चुकाया जा सकता। अतः माता-पिता एवं आचार्य का प्रतिदिन प्रिय कार्य करते हुए उन्हें सन्तुष्ट करें-

'यं मातापितरौ क्लेशं सहेते सम्भवेनृणाम्।
न तस्य निष्कृतिःशक्या कर्तुं वर्षशतैरपि॥
तयोर्नित्यं प्रियं कुर्यादाचार्यस्य च सर्वदा।
तेष्वेव त्रिषु तुष्टेषु तपः सर्वं समाप्यते॥'[19]

विकास की अन्धी दौड़ में व्यक्ति संस्कारहीन हो गया है, उसे स्वार्थ पूर्ति में किसी भी स्तर पर जाने में संकोच नहीं होता है। चरित्र क्या होता है इसका ज्ञान ही नहीं है। इसी के दुष्परिणामस्वरूप छोटी-छोटी बालिकाओं के साथ तक बलात्कार जैसी घटनाएं आज आम होती जा रही हैं। जो भारत संस्कृति और सभ्यता के बल पर जगत्गुरु जैसी सर्वोच्च पदवी पर बैठा था उसी भारत में विदेशी बालाओं को भी हवस का शिकार बनना पड़ रहा है और जो नारियां देवी का प्रतिरूप थीं उनमें सतीत्व की अजेय शक्ति

थी किन्तु आज वही नारी अर्थ हेतु यौन व्यापार करती हुई नजर आ रही है जबकि चरित्र की महत्ता को प्रदर्शित करता हुआ संस्कृत वाड्.मय शिक्षा देता है।

'वृतं यत्नेन संरक्षेत वित्तमायातियाति च।
अक्षीणः वित्ततः क्षीणः वृत्ततस्तु हतोहतः॥'

सम्पूर्ण संस्कृत वाड्.मय धर्मशास्त्रीय ज्ञान एवं आचार सरणि के नैतिक बोध का कुशल समन्वय हुआ है। इसमें मृत्यु लोक से मुक्ति एवं स्वर्ग लोक की प्राप्ति तथा सामान्य जीवन के लोकवृत्ति की झलक स्वतः स्पष्ट दिखाई देती है। संस्कृत वाड्.मय का परम पवित्र उद्देश्य सार्वणिक मंगल एवं पारलौकिक प्रशस्ति की कामना है, विपत्तिकाल और प्रगतिकाल में व्यक्ति को कैसा आचरण करना चाहिए। इसका महाकवि भर्तृहरि अपने नीतिशतक में में उल्लेख करते हुए कहते हैं-

'विपदि धैर्यमथाभ्युदये क्षमा, सदसि वाक्पटुता युधि विक्रमः।
यशसि चाभिरुचिब्यनं श्रुतौ प्रकृतिसिद्धिमिदं हि महात्मनाम्॥'[10]

संस्कृत वाड्.मय में परस्पर सौहार्द, त्याग, प्रेम, करुणा, ममता, दयालुता और कर्त्तव्यनिष्ठा जैसे पावन आदर्श सर्वत्र दृष्टिगोचर होते हैं। महाकवि कालिदास ने रघुवंश महाकाव्य में भरत की कर्त्तव्यनिष्ठा और - त्याग की मार्मिक झाँकी बड़े ही मनोरम ढंग से प्रस्तुत की है

पित्रा विसृष्टां मदपेक्षया यः श्रियं युवाप्यंकगतामभोक्ता।'
इयन्ति वर्षाणि तया सहोग्रमभ्यस्तीव व्रतमासिधारम्॥'[11]

हमारे देश की संस्कृति व्यक्ति के चरित्र को समुज्ज्वल हीरे की भाँति बनाने की प्रेरणा देती है पर नारी को माता तथा पर धन को मिट्टी के ढेले के समान समझना चाहिए। नारायण पंडित ने हितोपदेश में स्पष्ट उल्लेख किया है-

'प्राणा यथाऽऽत्मतोऽभीष्टा भूतानामपि ते तथा।
आत्मौपम्येन भूतानां दयां कुर्वन्ति साधवः॥
मातृवत्परदारेषु परद्रव्येषु लोष्ठवत्।
आत्मवत् सर्वभूतेषु यः पश्यति स पण्डितः॥'[12]

संस्कृत वाड्.मय इस लोक में कर्त्तव्यनिष्ठा त्याग, दया आदि सद्गुणों का पालन करने के साथ ही साथ मानव को पारलौकिक ज्ञान की ओर उन्मुख करता है। मैं शरीर नहीं हूँ एक आत्मा हूँ। आत्मा न मरती है और न ही उसे कोई मार सकता है, यह अजर है, अमर है, अजन्मा है। शाश्वत् सत्य है। यह सन्देश कठोपनिषद् एवं श्रीमद्भग्वद्गीता में प्राप्त होता है-

'न जायते म्रियते वा विपश्चिन्नायं कुतश्चिन्न बभूव कश्चित्।
अजोनित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे॥
''न जायते म्रियते वा कदाचिन्नायं भूत्वा भाविता वा न भूयः।
अजोनित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो, न हन्यते हन्यमाने शरीरे॥'[13]

संस्कृत वाड्.मय सम्मान पूर्वक जीवन यापन हेतु एक लोभ तृष्णा से विरत जीवन देने की शिक्षा देता है। हितोपदेश में वर्णित लोकोपकारिणी शिक्षा दर्शनीय है-

'सेवेव मानमखिलं ज्योत्वस्नेव तमो जरेव लावण्यम्।
हरिहरकथेव दुरितं गुणशतमप्यर्थिता हरित्॥
लोभेन वुद्धिश्चलति लोभो जनयते तृषाम्।
तृषातौ दुःखमाप्नोति परत्रेह च मानवः॥'[14]

संस्कृत वाड्.मय शिक्षा देता हुआ कहता है कि प्रत्येक मानव का परमकर्त्तव्य है कि सर्वप्रथम सन्मार्ग पर चलते हुए अपनी तथा अपने परिवार की उन्नति करें तत्पश्चात् विश्व के व्यक्तियों का चरित्र उच्च करके उन्हें आर्य या श्रेष्ठ बनावें। आत्महित के साथ-साथ संसार के हित का भी सदैव चिन्तन करें और राष्ट्र हित के साथ विश्वहित की कामना भी सदा करनी चाहिए। इन सद्विचारों की प्रेरणा संस्कृत वाड्.मय में यत्र-तत्र प्राप्त होती है इसी सन्दर्भ में ऋग्वेद तथा यजुर्वेद में निर्देश मिलता है-

'इन्द्रं वर्धन्तो अप्तुरः कृण्वन्तो विश्वमार्यम्।
अपघ्नन्तो अराव्णः॥'[15]

तथा

'सूर्चवर्चस स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रं दत्त जनभृत स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रं मे दत्त।
विश्वभृत स्थ राष्ट्रदा राष्ट्र मे दत्त स्वराज स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रममिष्मै दत्त॥'[16]

आधुनिक सन्दर्भ में हम किसी भी सम्बन्ध के विषय में विचार करें तो प्रत्येक सम्बन्ध अपने स्तर से कहीं अधिक निम्नता पर दिखाई पड़ते हैं। आज रिश्ते-नाते सब स्वार्थ से परिपूर्ण हो गये हैं। किसी को किसी के प्रति प्रेम, सौहार्द्र, सम्मान की भावना तो तिरोहित सी हो गई है। जबकि संस्कृत वाड्.मय में सम्मान, स्नेह, सहनशीलता, सहयोग, सामाजिकता, सौहार्द्रता, सौमनस्यता आदि की भावनाएं सर्वत्र दिखाई देती हैं। गुरु को तो साक्षात् परब्रह्म की ही संज्ञा से अभिहित किया गया है-

' गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः॥'[17]

गुरु की महिमा का वर्णन करते हुए मनुस्मृतिकार ने तो यहाँ तक कहा है कि शिष्य को गुरु से हीन वस्त्र, हीन आसन प्रयोग करना चाहिए तथा गुरु से पूर्व जागरण और पश्चात् शयन करना चाहिए और

गुरु से किस प्रकार बातचीत करें इत्यादि बातों पर बल दिया गया है, जिसकी शिक्षा देते हुए आज के समय में समाप्तप्राय सम्मान को सुरक्षित रखा जा सकता है-

'हीनान्नवस्त्रवेषः स्यात्सर्वदा गुरुसन्निधौ।
उत्थिष्ठेत्प्रथमं चास्य परमं चैव संविशेत्॥
प्रतिश्रवणसम्भाषे शयानो न समाचरेत्।
नासीनो न च भुञ्जानो न तिष्ठन्न पराङ्मुखः॥'[18]

संस्कृत वाड्.मय हमें निस्वार्थ कर्म करते हूए अपना, राष्ट्र का व विश्व का कल्याण करने की बात करता है।

सम्प्रति दिल्ली विश्वविद्यालय के राजधानी कालेज के हिन्दी विभाग के वरिष्ठ प्राध्यापक डा0 रमाकान्त शुक्ल के 'जयभारतभूमेः' नामक संस्कृत काव्य में भारत की झांकी दृष्टव्य है-

'गौरवशालिनि मोदप्रदायिनि
प्रकृतिनटीलीलाभूमे।
चतुर्वर्गफलदायिनि,
भगवन्नामरूपलीलाभूमे।
श्रमशक्तेरूल्लासविधामिनि,
रमाकान्तशुक्लभिनुते।
जय जय जय हे भारत भूमे।'[19]

इसी प्रकार इन्हीं की दूसरी रचना भूतले भाति में भारतम् में भी भारत देश का सुन्दर निदर्शन मिलता है-

'श्री दयानन्दगान्ध्युज्ज्वल गुर्जरम्।
स्वर्णबंग विवेकारविन्दोज्ज्वलम्।
लं दधत्
भूतले भाति मेऽनारतं भारतम्॥'[20]

स्वामी दयानन्द तथा महात्मा गाँधी आदि से उज्ज्वल गुजरात, स्वामी विवेकानन्द तथा योगिराज अरविन्द से उज्ज्वल सोनार, बंगाल एवं गुरुनानक आदि से उज्ज्वल पंजाब को धारण करता हुआ मेरा भारत भूतल पर सदा सुशोभित रहता है। इसी प्रकार विक्रमाजीत सिंह सनातन धर्म महाविद्यालय कानपुर की डॉ0 नवलता प्राध्यापिका संस्कृत विभाग की रचना 'प्रत्युषम्' में भारत देश की अनेकता में एकता की की प्रस्तुत की गयी है-

'विभिन्नाः जातिधर्माः वर्गभाषाः
प्रचलिता अस्मिन्
परम उद्घोष्यते सर्वत्र,
एकत्वस्य सन्देशः
न हिन्दूः मुस्लिमः ख्रिस्तो, न
सिक्खः बौद्धजैनादिः।
वयं वै भारतीया अस्मदीयो
भारतं देशः॥'[21]

महाकवि प्रो0 रेवा प्रसाद दिवेदी ने भारतवर्ष का मनोरम चित्रण अपने महाकाव्य 'स्वातन्त्रयसम्भवमु'में किया है। द्रष्टव्य है-

'आ दक्षिणान्धिप्रसरं सुमेरोन्मूध्नो धरां व्याव्य समुल्लसन्नतम्।
अब्धित्रिवेणी प्रणितांड.घ्रमूलं, वन्दामहे भारतवर्षविष्णुम्॥'[22]

निकर्ष

वास्तव में संस्कृत भाषा एवं साहित्य में भारत एक गौरवशाली राष्ट्र के रूप में प्रतिष्ठित है। आधुनिक समय में भी भारत अपने संस्कृत भाषा एवं साहित्य के कारण ही विश्व का सिरमौर है। संस्कृत भाषा और साहित्य से ही भारत में जो संस्कार विद्यमान है। वह विश्व के अन्य समाजों में दुर्लभ है। भारतीय कला, धर्म संस्कृति आदि की अनूठी विशेषताओं आज के बदले हुए समाज को नई दिशा एवं आयाम दे सकने में समर्थ है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *वाल्मीकि रामायण - सुन्दरकाण्ड—30/18*
2. *ऋग्वेद*
3. *अर्थववेद- 12—1—62*
4. *विष्णुपुराण- 2—3—24*
5. *भागवतपुराण- 5—6—13*
6. *अभिज्ञान शाकुन्तलम्- प्रथम अंक*
7. *अभिज्ञानशाकुन्तलम्- 4—9*
8. *मनुस्मृति- 2—121*
9. *मनुस्मृति – 2/227—228*

10. नीतिशतकम् - श्लोक- 64
11. रघुवंश – 13/67
12. हितोपदेश- श्लोक-12—14
13. कठोपनिषद- 2/18 तथा श्रीमद्भग्वद्गीता - 2/20
14. हितोपदेश - श्लोक- 132—134
15. ऋग्वेद - 9—63—5
16. यजुर्वेद - 10—4
17. गुरुगीता - 1—1
18. मनुस्मृति – 2/194—195
19. जयभारतभूमे - डॉ0 रमाकान्तशुक्ल - श्लोक – 27
20. भाति में भारतम् श्लोक- 51
21. प्रत्यूषम् - डॉ0 नवलता - पृष्ठ संख्या – 63
22. स्वान्त्रयसम्भवम्- 2/7 प्रोफेसर रेवा प्रसाद दिवेदी